भारतीय न्यायिक व्यवस्था की घटती विश्वसनीयता

शिल्पा विजय

किसी भी समाज में सुख शांति के दो प्रमुख मानदंड होते हैं, पहला क्या आम नागरिकों को रोजी-रोटी सुलभ है? दूसरा क्या व्यक्ति को न्याय सहजता से उपलब्ध है? रोजी-रोटी व अन्य बुनियादी सुविधाएं उपलब्ध कराना विधायिका और कार्यपालिका की जिम्मेदारी है। न्याय देना न्यायपालिका का काम है। आज न्यायिक सक्रियता अत्यंत चर्चा का विषय बन चुकी है। लेकिन क्या वाकई न्यायपालिका सक्रिय है? हां सक्रिय है, मगर उसकी सारी सक्रियता मुख्यतः राजनीतिक मामलों से जुड़ी नजर आती है। चाहे राजनेताओं पर भ्रष्टाचार के मामले हों या राज्यपाल पद के दुरुपयोग का मामला हो या हड़ताल-बंद प्रकरण उच्चतम न्यायालय ने बड़ी तेजी दिखाई। अब प्रश्न यह उठता है कि ऐसी ही तेजी गरीबों के मुकदमें निबटने में क्यों नहीं दिखाई जाती है?

किसी व्यक्ति को मौत की सजा सुनाने वाले, किसी की नौकरी खत्म या बहाल करने वाले, किसी की संपत्ति उसे

वापिस दिलवाने की ताकत रखने वाले, देश की सरकार को अपने आदेशों से फटकार लगाने वाले न्यायाधीश क्या इस बात से चिंतित नहीं है कि उनके गलत आचरण से न्यायपालिका की छवि जनता के बीच तेजी से गिरती जा रही है?

यह सच है कि भारतीय न्यायपालिका ने कार्यपालिका व व्यवस्थापिका की निष्क्रियता व अकर्मण्यता के फलस्वरूप उत्पन्न रिक्तता को भरने का प्रयास किया है एवं सामाजिक व आर्थिक कल्याण व सुरक्षा प्रदान करने हेतु अपनी सक्रिय भूमिका का निर्वाह कर आम जनमानस को प्रभावित किया है लेकिन न्यायपालिका अपना स्वयं का प्राथमिक कार्य सरल व त्वरित न्याय प्रदान करने हेतु तेजी नहीं दिखा पा रही है, वहीं हाल के वर्षों में न्यायपालिका के अंतर्गत भ्रष्टाचार और जवाबदेहिता को लेकर इतने मामले सामने आ रहे हैं जिससे न्यायपालिका की भूमिका पर न सिर्फ प्रश्नचिह्न लग रहे हैं, बल्कि जनमानस में उसके प्रति व्याप्त विश्वास में भी गिरावट आ रही है।

न्यायपालिका की सक्रिय भूमिका पर सबसे बड़ा प्रश्नचिह्न इस बात से लगता है वह कार्यपालिका व्यवस्थापिका और प्रशासनिक निकायों की कमियों पर फटकार लगा रही है, लेकिन पहले उसे क्या स्वयं की कमियों को दूर करने का प्रयास नहीं करना चाहिए?

आज न्यायिक सक्रियता का स्वरूप इतना अधिक बदल चुका है कि चाहे आरक्षण व्यवस्था, सांसदों की बर्खास्तगी, हड़ताल, राज्यपाल पद जैसे बड़े मुद्दे हों या फिर नर्सरी दाखिला, ट्रेफिक जाम, कचरे की सफाई हो या अतिक्रमण जैसे छोटे-छोटे मुद्दे इस सब पर 'अंतिम निर्णयकर्ता' न्यायपालिका बन चुकी है।

भारतीय न्यायपालिका में व्याप्त अनेक भ्रष्टाचार और अनियमितताओं के गंभीर मामले हाल में सामने आए हैं–

- उच्चतम न्यायालय ने इलाहाबाद उच्च न्यायालय में बढ़ते भ्रष्टाचार के संबंध में 26 नवंबर 2011 के अपने फैसले में कहा–"शेक्सपीयर ने हेमलेट में लिखा था कि डेनमार्क में कुछ सड़ रहा है। इसी तरह की बात इलाहाबाद उच्च न्यायालय के बारे में भी कही जा सकती है। हाईकोर्ट के कई जज 'अंकल सिंड्रोम' से गुजर रहे हैं। कुछ जजों तथा वकीलों के बीच नापाक गठजोड़ है।"
- जानेमाने कानूनविद् और पूर्व विधि एवं न्याय मंत्री शांति भूषण ने अत्यंत चौकाने वाला खुलासा किया कि "उच्चतम न्यायालय के 16 पूर्व मुख्य न्यायाधीश में से कम से कम 8 निश्चित तौर पर भ्रष्ट है। हलफनामे में उन्होंने 16 पूर्व सीजेआई के नामों का भी उल्लेख किया है।"
- कोलकाता हाईकोर्ट के जज सौमित्र सेन पर महाभियोग की तलवार लटक रही है। सेन पर वित्तीय अनियमितताओं का आरोप है।
- कर्नाटक के हाईकोर्ट के चीफ जस्टिस पी. डी. दिनकरण के खिलाफ आय से अधिक संपत्ति का मामला है।
- पी. एफ. घोटाले के नाम से सीबीआई जांच में गाजियाबाद जिला अदालत के तृतीय और चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों के पी. एफ. खातों से 6.58 करोड़ रुपए निकाल कर खर्च करने का खुलासा हुआ है। इसमें सुप्रीम कोर्ट के पूर्व जज समेत 23 जज लिप्त पाए गए।
- पूर्व मुख्य न्यायाधीश सभरवाल पर 2006 में दिल्ली में सीलिंग के दौरान आरोप लगा कि इस मुहिम से उन्होंने बेटों के व्यापार को लाभ पहुंचाया।
- 13 अगस्त 2008 को पंजाब, हरियाणा हाईकोर्ट की जज निर्मलजीत कौर के घर किसी ने 15 लाख पहुंचा दिए। उन्होंने पुलिस में शिकायत की और जांच में पता चला कि पैसा किसी अन्य जज के घर पहुंचाया जाना था।

- पूर्व मुख्य न्यायाधीश और राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग के अध्यक्ष के. जी. बालकृष्णन अपने भाई और दामादों, जिन्होंने बालकृष्णन के कार्यकाल के दौरान नई संपत्तियां अर्जित की पर लगे भ्रष्टाचार के आरोपों से घिरे हैं।
- राजस्थान में उच्च न्यायालय द्वारा ली गई एडीजे (एडिश्नल डिस्ट्रीक्ट जज) परीक्षा में भ्रष्टाचार का आरोप लगाते हुए राज्य के पचास हजार वकील हड़ताल पर गए।
- भारतीय न्यायपालिका 'सूचना के अधिकार' कानून के तहत न सिर्फ न्यायाधीशों की संपत्ति के ब्यौरे देने में भी आना-कानी प्रदर्शित की थी, बल्कि वह शुरू से ही सूचना के अधिकार के न्यायालयों में क्रियान्वयन के बारे में उदासीन रवैया प्रकट किया।

केंद्रीय सूचना आयोग द्वारा न्यायाधीशों की संपत्ति संबंधी सूचना को सार्वजनिक किए जाने संबंधी आदेश के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय अपने अधीनस्थ उच्च न्यायालय में अपील में गया था, यह संभवतः देश के न्यायिक इतिहास की इकलौती घटना है। जिसमें सुप्रीम कोर्ट अपने से अधीनस्थ कोर्ट में अपील में गया है, हाईकोर्ट ने स्थगन दे दिया है, क्योंकि यहां तो न्यायालय स्वयं ही एक पक्ष होगा।

- न्यायिक अवमानना कानून का दुरुपयोग करते हुए न्यायपालिका ने अनेक लोगों को दोषी ठहराया जिन्होंने न्यायपालिका की आलोचना की या उसके खिलाफ आरोपों से संबंधित तथ्य उजागर किए। न्यायपालिका में भ्रष्टाचार को लेकर एक लेख के मामले में प्रशांत भूषण पर अदालत की अवमानना का मामला लंबित है। इसी प्रकार दिल्ली में सीलिंग भ्रष्टाचार उजागर करने वाले पत्रकारों पर भी अवमानना का आरोप लगाया गया। इस प्रकार आत्म-विश्लेषण करने की बजाय अदालत की अवमानना के तहत मुकदमे चलाकर न्यायाधीश आरोप लगाने वाले का मुंह बंद कर देते हैं। किसी जज के अनैतिक आचरण को उजागर करने का अर्थ न्यायपालिका की अवमानना नहीं है। वह तो अधिक से अधिक संबंधित न्यायाधीश की मानहानि मानी जाएगी, जिसके लिए वह न्यायाधीश मौजूदा कानून के तहत मुकदमा चलाने को स्वतंत्र हैं। व्यक्तिगत दुराचरण को कानून से छिपाना, न्यायपालिका की विश्वसनीयता को प्रभावित कर सकता है।
- न्यायाधीशों द्वारा न्यायाधीशों को नियुक्त करने की वर्तमान प्रणाली ने दुर्भाग्यवश संरक्षणवाद का रूप ले लिया है। वर्ष 2007 में पहली बार 'न्यायाधीशों की नियुक्ति' की प्रक्रिया जिसे न्यायपालिका ने सरकार से हस्तगत लिया था जिसके तहत न्यायाधीशों द्वारा ही उच्च व सर्वोच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्ति की जाती है और इससे पहले कार्यपालिका की जो भूमिका प्रभावी भूमिका रहती थी वो अब समाप्त हो गई है। महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि क्या इस नई प्रणाली के कारण स्थिति में कोई गुणात्मक परिवर्तन आया? 2007 में कई संदिग्ध न्यायिक नियुक्तियों और प्रोन्नतियों का भी भंडाफोड़ हुआ। जस्टिस सौमित्र सेन की नियुक्ति इसी प्रणाली के तहत हुई थी, उनके द्वारा किया गया कथित आचरण उनके न्यायाधीश बनने से पहले की घटना है। ऐसे अनेक उदाहरण हैं। इसी वजह से इस तरह की नियुक्तियों और प्रोन्नतियों में मुख्य न्यायाधीश और उच्चतम न्यायालय में उनके कालेजियम के मनमानी सिफारिशों से पर्दा हटाया गया।
- भारत के उच्च न्यायालयों में 3 मिलियन तथा अधीनस्थ न्यायालयों में 26.3 मिलियन केस लंबित चल रहे हैं। विश्व के लोकतांत्रिक देशों के तुलना में भारत में न्यायाधीशों की संख्या जनसंख्या के अनुपात में अत्यंत न्यूनतम है। देश में सैकड़ों

विचाराधीन कैदी वर्षों तक मुकदमा चलाए जाने की प्रतीक्षा करते रहते हैं।

आज ऐसा शायद ही कोई दिन रहता है, जब सुप्रीम कोर्ट के आदेश-निर्देश अखबारों में पढ़ने को न मिले। कभी-कभी न्यायपालिका लोकप्रियता के मोह में ऐसे आदेश-निर्देश दे तो देती है पर उसके क्रियान्वयन में आने वाली व्यावहारिक कठिनाइयों और तकनीकी पेचिदगियों को समझ नहीं पाती जिससे प्रशासन असमंजसता की स्थिति में पड़ जाता है। प्रशासन कानूनी विधान से चलाना न संभव है और न अपेक्षित। सड़कों पर दौड़ती बसों, कारों की रफ्तार हो या शौचालय की सफाई या ट्रेफिक जाम का मामला हो या आवारा गायों और बंदरों के उत्पात जैसे मुद्दों पर भी न्यायालय निर्देश दे रहा है।

"जूता कहां चुभ रहा है, वह जूता पहनने वाला ही बता सकता है," इस प्रकार किसी प्रशासकीय विभाग या संस्था की वास्तविक स्थिति और समस्याएं क्या हैं वह बाहर के लोग नहीं समझ सकते? लेखिका एवं सामाजिक कार्यकर्ता अरुंधति राय ने न्यायापालिका की इस प्रवृत्ति पर कटाक्ष करते हुए लिखा है–"वह इस देश में सार्वजनिक नीति का प्रमुख पंच बन गया है, जो खुद को विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र के रूप में बाजार में पेश करना पसंद करता है।"

अतः यह मानना सही नहीं है कि जहां कहीं भी सरकार असफल होती है, वहां न्यायपालिका हमेशा सफलता पा लेगी। साथ ही न्यायपालिका को अपनी भूमिका के निर्वाह की प्राथमिक शर्त न्यायिक सुधार एवं जवाबदेहिता के प्रति गंभीर एवं सक्रिय बनना होगा–

- वैश्वीकरण के इस दौर में सरल और कारगर न्याय आर्थिक विकास का प्रमुख घटक बन गया है अतः अदालतों में बड़े पैमानों पर सूचना प्रौद्योगिकी को बढ़ावा, न्यायाधीशों के खाली पदों को भरा जाना तथा 'वैकल्पिक विवाद निदान' (Alternative Dispute Resolutions, ADR) की प्रक्रिया को ज्यादा प्रोत्साहन एवं विस्तार मिलना चाहिए।
- न्यायिक अवमानना संबंधी कानून में संशोधन करके यह व्यवस्था सुनिश्चित की जानी चाहिए कि आरोपी न्यायाधीशों की जांच हो और उन्हें सजा भी मिले और इस कानून का दुरुपयोग रोका जाए ताकि 'सत्यमेव जयते' की भावना सुरक्षित रह सके।
- यह एक त्रासद पहलू है कि नियुक्ति संबंधी ज्यादातर मामले उस समय के हैं जब नियुक्तियों का अधिकार न्यायपालिका ने अपने हाथ में ले लिया है। आज आवश्यक है न्यायाधीशों की नियुक्ति की प्रक्रिया में सुधार व पारदर्शिता लाई जाए। मौजूदा प्रणाली के स्थान पर एक ऐसी प्रभावी प्रणाली की आवश्यकता है, जिसके लिए न्यायपालिका और कार्यपालिका दोनों समान रूप से उत्तरदायी हो।
- हमारे देश में संविधान और कानूनी ढांचे का मौजूदा ताना-बाना ऐसा है कि उसमें किसी न्यायाधीश के खिलाफ अनुशासनात्मक कार्रवाई की गुंजाईश न के बराबर है। निष्कासन की प्रक्रिया काफी जटिल है। यह प्रक्रिया समय और जनता के पैसों का अपव्यय करने के साथ ही संसद के कार्यभार में भी बढ़ोतरी करती है। जरूरत ऐसी प्रणालियों की है, जिन्हें सुचारू रूप से लागू किया जा सके।
- न्यायपालिका में बढ़ते भ्रष्टाचार को रोकने के लिए एक निष्पक्ष व स्वतंत्र जांच एजेंसी या न्यायिक समिति का गठन किया जाना चाहिए जिसे पर्याप्त शक्तियां प्राप्त होनी चाहिए। भ्रष्टाचार को रोकने हेतु सीधे-सीधे सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश को भी कार्यवाही का पर्याप्त अधिकार दिया जा सकता है, ताकि वह न्यायपालिका में भ्रष्टाचार के मामलों के लंबित होने की वजहों के बारे में उच्च

न्यायालयों से भी जवाब तलब कर पाए।

- ❖ न्यायिक भाई-भतीजावाद की प्रवृत्ति पर रोक लगाने के लिए भी सर्वोच्च न्यायालय के सुझाव के अनुरूप यह सुनिश्चित किया जा सकता है कि जिन न्यायाधीशों के सगे संबंधी उसी अदालत में कार्यरत हैं, एक नीति के तहत उनका तबादला कर दिया जाए।
- ❖ यह भी जरूरी है कि न्यायाधीशों के वेतन व सेवा शर्तों में समुचित वृद्धि की जाए ताकि न्यायिक क्षेत्र की तरफ उनका रुझान, प्रतिष्ठा, दक्षता और समर्पण में वृद्धि हो।

आज जरूरत इस बात की है कि देश के सभी सांसद, चाहे वे किसी भी राजनीतिक दल से हो, सेवानिवृत्त न्यायाधीश, मौजूदा न्यायाधीश, वकील, कानूनविद् व बौद्धिक वर्ग चिंतन व मनन करें। 'न्यायविद् फली एस. नरीमन' का यह कथन उल्लेखनीय है "उच्चतर न्यायपालिका को अपनी उजली प्रतिष्ठा को बनाए रखने के बहुत कुछ करना बाकी है।" (There much to be done by the higher Judiciary to maintain its bright image) अधिकार और दायित्व दोनों एक दूसरे के पूरक हैं जवाबदेही भी उसी अनुपात में होनी चाहिए। अन्य देशों की तुलना में भारतीय न्यायपालिका के पास व्यापक अधिकार व शक्तियां हैं और इसकी तरफ भारत के जनसाधारण असंख्य आशाओं को पूरा करने वाले के रूप देखते हैं। भारतीय न्यायपालिका को भी अपनी शक्तियों के प्रयोग के साथ अपने उत्तरदायित्वों और जवाबदेहिता के प्रति भी उतनी ही सजगता एवं सक्रियता प्रदर्शित करनी होगी।

संदर्भ सूची–

राजस्थान पत्रिका, 18 सितंबर, 2010 एवं 20 अक्टूबर, 2010
दैनिक भास्कर, 30 नवंबर, 2010
इंडिया टूडे अक्टूबर, 2007
The Hindu 15 Aug-2007 Delhi,
www.rtiindia.org